राजस्थान उच्च न्यायालय , जोधपुर

डी.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 12726/2013

राजेन्द्र कुमार मोदी पुत्र श्री लक्ष्मी नारायण मोदी, आयु लगभग 46 वर्ष, निवासी 87, एल-ब्लॉक, हनुमान मंदिर के पास, श्रीगंगानगर (राज.).

----याचिकाकर्ता

बनाम

1. सचिव, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली के माध्यम से भारत संघ।

2. महानिदेशक, प्रसार भारती (भारतीय प्रसारण निगम), ऑल इंडिया रेडियो, आकाशवाणी भवन, संसद मार्ग, नई दिल्ली।

3. उप महानिदेशक (इंजी.)/कार्यालय प्रमुख, प्रसार भारती (भारतीय प्रसारण निगम), ऑल इंडिया रेडियो, आकाशवाणी भवन, सूरतगढ़।

4. केन्द्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, जोधपुर बेंच, जोधपुर।

----प्रतिवादी

अपीलकर्ता(ओं) के लिए: श्री संजय नाहर

प्रतिवादी(ओं) के लिए: श्री अभिषेक शर्मा

माननीय मुख्य न्यायाधीश श्री मनिंद्र मोहन श्रीवास्तव

माननीय न्यायमूर्ति मुन्नूरी लक्ष्मण

रिपोर्ट योग्य

08/05/2024

1. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत दायर इस याचिका के माध्यम से याचिकाकर्ता ने विद्वान केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण, जोधपुर पीठ, जोधपुर (जिसे इसके बाद 'न्यायाधिकरण' कहा जाएगा) द्वारा पारित दिनांक 10.07.2013 के आदेश की सत्यता और वैधता पर सवाल उठाया है, जिसके द्वारा मूल आवेदन को खारिज कर दिया गया है।

2. इस याचिका में शामिल विवाद के निर्धारण के लिए आवश्यक सर्वोत्कृष्ट तथ्य यह हैं कि याचिकाकर्ता को शुरू में दिनांक 07.11.1991 के आदेश द्वारा नियुक्त किया गया था और उसने 11.11.1991 को अपना कार्यभार ग्रहण किया था। जब वह सेवा में था, तो 08.05.1998 को एक समाप्ति आदेश जारी किया गया, जिससे पक्षों के बीच विवाद उत्पन्न हो गया। दिनांक 21.06.2000 को केन्द्रीय सरकार औद्योगिक न्यायाधिकरण-सह-श्रम न्यायालय, जयपुर (जिसे आगे 'श्रम न्यायालय' कहा जाएगा) को भेजे गए संदर्भ पर दिनांक 05.11.2001 को याचिकाकर्ता के पक्ष में निर्णय पारित किया गया, जिसमें याचिकाकर्ता की सेवा समाप्ति को अवैध और कानून के अनुसार निष्क्रिय घोषित किया गया। निर्णय के विरुद्ध प्रतिवादियों द्वारा इस न्यायालय की एकल पीठ के समक्ष प्रस्तुत की गई याचिका (एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 7175/2005) को दिनांक 10.03.2006 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया, जिसमें निर्णय को बरकरार रखा गया। तत्पश्चात प्रतिवादियों ने डी.बी. विशेष अपील रिट संख्या 1226/2008 के रूप में रिट अपील प्रस्तुत की, जिसे भी इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा दिनांक 01.07.2011 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया।

3. ऐसा प्रतीत होता है कि मुकदमेबाजी के पहले दौर के बाद याचिकाकर्ता को सेवा में बहाल कर दिया गया था, हालांकि, उसे 02.04.2012 को दो कारणों से फिर से सेवा से हटा दिया गया: पहला, यह कहा गया कि उसे कर्मचारी चयन आयोग के माध्यम से विधिवत रूप से नहीं चुना गया था और दूसरा, उसकी सेवाओं की अब आवश्यकता नहीं थी।

4. इसके बाद याचिकाकर्ता ने मूल आवेदन के माध्यम से केंद्रीय प्रशासनिक न्यायाधिकरण से संपर्क किया, जिसमें 02.04.2012 के आदेश की सत्यता और वैधता पर सवाल उठाया गया और नियमितीकरण के लिए भी प्रार्थना की गई, जिसे 10.07.2013 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया, जिससे वर्तमान याचिका को जन्म मिला।

5. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि न्यायाधिकरण द्वारा समाप्ति के आदेश के विरुद्ध याचिकाकर्ता द्वारा मांगी गई राहत और नियमितीकरण की राहत को अस्वीकार करने का मुख्य कारण यह है कि समाप्ति आदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (जिसे आगे '1947 का अधिनियम' कहा जाएगा) की धारा 25 एफ में उल्लिखित वैधानिक आवश्यकता के साथ-साथ मुआवजे के अनुपालन के बाद पारित किया गया था।

6. याचिकाकर्ता के विद्वान वकील के अनुसार, समाप्ति आदेश को रद्द करने के बाद, याचिकाकर्ता को सेवा में बने रहना माना जाता है और इस आधार पर उसकी सेवाओं को समाप्त करना कि उसकी सेवाओं की अब आवश्यकता नहीं है, केवल दिखावा है क्योंकि याचिकाकर्ता ने बहुत लंबे समय तक टाइपिस्ट के रूप में काम करना जारी रखा था और रिकॉर्ड पर ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह दर्शाता हो कि टाइपिस्ट का कोई काम नहीं था या कोई अन्य नियमित नियुक्ति हुई थी या कार्यालय बंद था या कार्यालय में टाइपिंग का उपयोग पूरी तरह से बंद कर दिया गया था।

7. याचिकाकर्ता का यह कहना है कि सचिव, कर्नाटक राज्य एवं अन्य बनाम उमा देवी एवं अन्य [(2006) 4 एससीसी 1] के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसार उनके मामले पर नियमितीकरण के लिए विचार किया जाना चाहिए था, लेकिन प्रतिवादियों ने छंटनी की आड़ में उनकी सेवाओं को समाप्त कर दिया, जो कि कानून की दृष्टि से अवैध और असंधारणीय है।

8. इसके विपरीत, प्रतिवादियों के विद्वान वकील ने यह कहा कि न्यायाधिकरण ने मूल आवेदन को खारिज कर दिया था, क्योंकि याचिकाकर्ता को अधिनियम 1947 की धारा 25 एफ के प्रावधानों के उचित अनुपालन के बाद सेवा से हटा दिया गया था। याचिकाकर्ता को पद धारण करने का कोई अधिकार नहीं था, क्योंकि वह नियमित कर्मचारी नहीं था और केवल तदर्थ कर्मचारी था। उन्होंने आगे कहा कि जब प्रतिवादीगण यह मामला लेकर आए हैं कि याचिकाकर्ता की सेवाओं की अब आवश्यकता नहीं है, तो आगे की जांच की आवश्यकता नहीं है और यह मान लिया जाना चाहिए कि याचिकाकर्ता के पास कोई काम नहीं था।

9. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है और विवादित आदेश का अवलोकन किया है तथा मामले के अभिलेख का भी अध्ययन किया है।

10. हम पाते हैं कि याचिकाकर्ता ने विशेष रूप से यह दावा किया है कि प्रतिवादीगण को टाइपिस्ट की आवश्यकता थी और इसलिए, मांग किए जाने पर, याचिकाकर्ता का नाम रोजगार कार्यालय द्वारा प्रायोजित किया गया और उसके बाद उसे टाइपिंग टेस्ट दिया गया, जिसके बाद उसकी नियुक्ति हुई। यद्यपि याचिकाकर्ता के नियुक्ति आदेश में कहा गया है कि याचिकाकर्ता को तदर्थ क्षमता में नियुक्त किया गया है, लेकिन उसकी तदर्थ नियुक्ति लगभग 8 वर्षों तक जारी रही। यदि कोई व्यक्ति लगभग 8 वर्षों तक सेवा में बना

रहता है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि आवश्यकता अस्थायी है। एक बार जब कोई व्यक्ति काफी अवधि तक सेवा में बना रहता है, तो "तदर्थ" शब्द का प्रयोग महत्व खो देता है। हालाँकि, ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिवादियों ने 1947 के अधिनियम की धारा 25 एफ के अधिदेश का पालन किए बिना याचिकाकर्ता की सेवाओं को समाप्त कर दिया।

11. विवाद उठने पर, श्रम न्यायालय द्वारा याचिकाकर्ता के पक्ष में दिनांक 05.11.2001 का निर्णय पारित किया गया, जिसकी पुष्टि उच्च न्यायालयों के समक्ष सभी अनुवर्ती कार्यवाहियों में की गई।

12. ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिवादी किसी भी तरह से याचिकाकर्ता की सेवाओं से छुटकारा पाने के लिए दृढ़ थे, इसलिए उन्होंने फिर से 1947 के अधिनियम की धारा 25 एफ के प्रावधानों का सहारा लिया और याचिकाकर्ता की सेवाओं को दो आधारों पर समाप्त कर दिया: पहला, कि उसका चयन कर्मचारी चयन आयोग के माध्यम से नहीं हुआ था और दूसरा, उसकी सेवाओं की अब आवश्यकता नहीं थी।

13. जहां तक कर्मचारी चयन आयोग के माध्यम से याचिकाकर्ता का चयन न होने का संबंध है, इसे 1947 के अधिनियम की धारा 25 एफ के तहत शक्ति का आह्वान करने का आधार नहीं बनाया जा सकता। याचिकाकर्ता कोई पिछले दरवाजे से प्रवेश करने वाला व्यक्ति नहीं था। वह रोजगार कार्यालय में पंजीकृत बेरोजगार युवक था। प्रतिवादियों द्वारा की गई मांग के आधार पर ही याचिकाकर्ता का नाम रोजगार कार्यालय के माध्यम से प्रायोजित किया गया था। इसके बाद याचिकाकर्ता का टाइपिंग टेस्ट लिया गया और उसे उपयुक्त पाए जाने पर नियुक्त किया गया। इन परिस्थितियों में यह नहीं कहा जा सकता कि याचिकाकर्ता ने पिछले दरवाजे से नियुक्ति प्राप्त की थी।

14. यद्यपि याचिकाकर्ता को तदर्थ क्षमता में नियुक्त किया गया था, लेकिन उसकी नियुक्ति लगभग 8 वर्षों की काफी लंबी अवधि तक जारी रही, जब वर्ष 1998 में अचानक उसकी सेवाएं समाप्त कर दी गईं। अभिलेखों से पता चलता है कि याचिकाकर्ता के मामले को नियमितीकरण के लिए विचार किया गया था, लेकिन उसे नियमित नहीं किया गया और याचिकाकर्ता की सेवाओं को समाप्त करने का यही एकमात्र कारण था, वह भी अधिनियम 1947 की धारा 25 एफ के अधिदेश का पालन किए बिना।

15. सब कुछ कहने और करने के बाद, याचिकाकर्ता को बहाली के पुरस्कार के बाद सेवाओं में बहाल कर दिया गया, यह नहीं कहा जा सकता कि याचिकाकर्ता की सेवाओं की अब आवश्यकता नहीं थी। वर्ष 2011 में उन्हें बहाल कर दिया गया। हम यह भी देखते हैं कि यद्यपि 05.11.2001 को केन्द्रीय सरकार औद्योगिक न्यायाधिकरण-सह-श्रम न्यायालय, जयपुर द्वारा उनके पक्ष में एक निर्णय पारित किया गया था, फिर भी मामला लगातार मुकदमेबाजी में था और केवल जब रिट अपील खारिज कर दी गई, तो इसने 2011 में उनकी बहाली का मार्ग प्रशस्त किया, अर्थात बहाली के निर्णय के 10 वर्ष पश्चात। बहाली का आदेश पारित होते ही, 02.04.2012 के विवादित आदेश के अनुसार सेवा समाप्ति का आदेश पारित कर दिया गया। यद्यपि सेवा समाप्ति के आदेश में कहा गया है कि याचिकाकर्ता की सेवाओं की अब आवश्यकता नहीं है, फिर भी यह अपने आप में अंतिम शब्द नहीं है। प्रतिवादियों की दलीलों में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे पता चले कि या तो कार्यालय बंद था या नियमित भर्ती प्रक्रिया के माध्यम से किसी अन्य नियमित पदधारी को नियुक्त किया गया था और कोई अन्य पद नहीं था या कार्यालय में टाइपिंग का काम छोड़ दिया गया था और दस्तावेजों को तैयार करने के लिए कोई अन्य तरीका अपनाया गया था। इसका मतलब है कि याचिकाकर्ता की सेवाओं को इस आधार पर समाप्त करना कि सेवाओं की अब

आवश्यकता नहीं थी, एक दिखावा था और केवल याचिकाकर्ता की सेवाओं को वापस लेने का मामला बनाने का एक प्रयास था। तथ्यों के आधार पर, हमें यह मानना होगा कि प्रतिवादियों द्वारा 1947 के अधिनियम की धारा 25 एफ के तहत शक्ति का प्रयोग पूरी तरह से अनुचित था। प्रतिवादी भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के तहत एक राज्य है। यह एक आदर्श नियोक्ता होने के नाते, जब तक कि समाप्ति के कारण वास्तव में मौजूद न हों, उसे छंटनी की शक्तियों का यांत्रिक रूप से प्रयोग करने की अनुमति नहीं दी जा सकती। हमारा विचार है कि यह सब याचिकाकर्ता की सेवाओं को बहाल करने के बाद नियमित करने से बचने के लिए किया गया था।

16. यह मामला नहीं है कि याचिकाकर्ता किसी लंबित मामले में अंतरिम आदेश के आधार पर सेवा में नियमितीकरण का दावा कर रहा था। वर्तमान मामला ऐसा है जिसमें श्रम न्यायालय द्वारा 05.11.2001 को सेवा समाप्ति के आदेश को रद्द कर दिया गया था। जब प्रतिवादियों द्वारा सभी उपचार समाप्त कर दिए गए, तथा निर्णय अंतिम हो गया, तो याचिकाकर्ता को सेवा में पुनः बहाल माना जाएगा, जिसके परिणामस्वरूप यह कानूनी परिणाम होगा कि उसे कभी सेवा से नहीं हटाया गया तथा उसे उसकी नियुक्ति की प्रारंभिक तिथि से निरंतर सेवा में माना जाएगा। यदि यह कानूनी स्थिति है, तो हमारे विचार से, सचिव, कर्नाटक राज्य एवं अन्य बनाम उमा देवी एवं अन्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विस्तारित एक बार के उपाय के रूप में नियमितीकरण का लाभ वर्तमान याचिकाकर्ता को भी दिया जाना आवश्यक है। विद्वान न्यायाधिकरण का यह मत कि ऐसे मामले में याचिकाकर्ता वादी होने के कारण नियमितीकरण का लाभ पाने का हकदार नहीं होगा, स्वीकार नहीं किया जा सकता। नियुक्ति की प्रारंभिक तिथि से ही याचिकाकर्ता का सभी कानूनी उद्देश्यों के लिए सेवा में बने रहना निश्चित रूप से उसे नियमितीकरण के लिए विचार किए जाने का हकदार बनाता है।

नियमितीकरण के लिए उसके मामले पर विचार किए बिना, 1947 के अधिनियम की धारा 25 एफ में निहित प्रावधानों की आड़ में अस्थिर आधार पर उसकी सेवाओं को समाप्त करना कानून के तहत स्वीकार्य नहीं है।

17. उपरोक्त विचार के मद्देनजर, न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेश स्पष्ट रूप से अवैधानिक और विकृत है और इसलिए इसे रद्द किया जाता है। परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता की सेवा समाप्ति का आदेश रद्द किया जाता है और उसे तत्काल सेवा में बहाल किया जाता है। चूंकि मुकदमेबाजी के दोनों दौरों में सेवा समाप्ति आदेश अवैध पाया गया है, इसलिए याचिकाकर्ता को सेवा में जारी माना जाएगा। हालांकि, इस बात को ध्यान में रखते हुए कि रिट याचिका के निपटारे में देरी के लिए याचिकाकर्ता या प्रतिवादियों को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है, मामले की परिस्थितियों में, हम पिछले वेतन का लाभ केवल 50% तक सीमित रखने के लिए इच्छुक हैं, जो याचिकाकर्ता को चार महीने की अवधि के भीतर देय होगा।

18. प्रतिवादी नियमितीकरण की मौजूदा नीति के अनुसार और कानूनी स्थिति को ध्यान में रखते हुए कि वह निरंतर सेवा में माना जाता है, नियमितीकरण के लिए याचिकाकर्ता के मामले की जांच करेंगे।

19. रिट याचिका तदनुसार अनुमति दी जाती है।

(मुन्नूरी लक्ष्मण), जे (मनींद्र मोहन श्रीवास्तव), सीजे

(यह अनुवाद एआई टूल: SUVAS की सहायता से किया गया है)

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के लिए सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।